THE ECONOMIC TIMES

Date:18-01-23

Bring the Periphery Closer, Responsibly

ET Editorials

The Parvatmala initiative's focus on mainstreaming the 13 Himalayan states, particularly the border and buffer areas, is critical and timely. Turning the border areas into growth engines that are integrally connected to the rest of the country will have apositive impact on national security. However, it is essential that mainstreaming should not become a push for homogenisation.

Abandoning the post-1947 hands-off policy that left far-flung and border areas underdeveloped was long overdue. It has had unfavourable impact on India's strategic security. It has meant that people in these areas have been unable to benefit from the economic and development trends in the rest of the country. The Parvatmala initiative is a corrective. The engagement with the 'ignored' periphery will focus on governance, development and national security. But the efforts to connect and engage must avoid a swing in the opposite direction. Localisation in response to specific circumstances and peculiarities will be necessary, and border areas and buffer zones will need infrastructure standardisation for strategic reasons. This is where expertise, and better understanding of local circumstances and the ecology, will be critical. Development and construction of strategic infrastructure must not overlook local peculiarities, be it ecological, social or economic. The identified focus areas — enhancing livelihoods, dealing with insurgency and improved assessments for sectors like tourism and agriculture, international sharing of resources such as water, hydel and highways — need engagement.

The initiative must be a two-way process, with the administrators not just taking government programmes, schemes and services to these areas but also taking inputs from communities in the region to have more effective delivery and integration.

दैनिक भास्कर

Date:18-01-23

जजों की चुनाव-प्रक्रिया का विवाद कब सुलझेगा

संपादकीय

सरकार ने एक बार फिर जजों की नियुक्ति को लेकर वर्तमान कॉलेजियम सिस्टम बदलने का दबाव डालना शुरू किया है। इसके पहले भी संवैधानिक पदों पर बैठे लोगों ने खुलेआम इस सिस्टम को प्रजातंत्र के खिलाफ बताया है। सरकार का प्रश्न है कि जनमत से चुनी गई लोकसभा और उसमें बहुमत पाकर बनी सरकार के मुकाबले क्या चंद जज द्वारा अपने जजों का चुनाव करना सही माना जा सकता है? दरअसल संसद ने 2015 में एक कानून पास किया, जिसमें कॉलेजियम (जो पूर्ण रूप से जजों की सदस्यता वाला होता है) की जगह एक आयोग (एनजेएसी) बनाया था। कानून के प्रावधान ऐसे थे कि सरकार और उसके प्रतिनिधियों की रजामंदी के बिना कोई नियुक्ति नहीं हो सकती थी। सुप्रीम कोर्ट ने इन प्रावधानों को न्यायपालिका की स्वतंत्रता के खिलाफ माना। यहां एक और मौलिक सवाल है। आज देश में जितने भी मामले हैं उनमें से लगभग 46% में सरकार वादी या प्रतिवादी है। क्या ऐसे में अगर जजों की नियुक्ति में उसकी भूमिका रहेगी तो वह 'इंटरेस्टेड पार्टी' नहीं मानी जाएगी? क्या जनता ऐसे नियुक्त हुए जजों के फैसले को भी उसी भाव से देखेगी? यह बात आज ज्यादा समीचीन है क्योंकि देश में विचारधारा के स्तर पर जबरदस्त बहस है। व्यक्ति, संस्थाएं, राज्य के अभिकरण और स्वयं सत्ता में बैठा वर्ग एक पक्ष या दूसरे पक्ष की वकालत करता है। इन स्थितियों में जबकि हर संस्था और सरकार के फैसले विचारधारा-विशेष के चश्मे से देखे जा रहे हों, क्या जरूरी नहीं कि कम से कम न्यायपालिका की स्वायत्तता पर देश में एक राय बने? सरकार को भी दूरदृष्टि रखते हुए जजों को चुनने की प्रक्रिया पर स्वस्थ विमर्श करना चाहिए।

Date:18-01-23

छोटी बचतों को बड़ा प्रोत्साहन देना जरूरी

संपादकीय

कोविड के पहले लॉकडाउन के दौरान हजारों लोग शहरों से पैदल अपने गांव-घरों की ओर निकल पड़े थे। रोजगार टूटने के बाद उनके पास पंद्रह दिन तक भी जीने-खाने की बचत नहीं थी । भारत के करीब 50% परिवारों के पास उनकी मासिक आय की 10% भी बचत नहीं है। यह खुलासा मनी - 9 के पर्सनल फाइनेंस सर्वे में हुआ, जो 31 हजार परिवारों के बीच हुआ था। हमारे पास पर्याप्त बचत नहीं हो तो इसका बड़ा असर हमारे साथ सरकार पर भी पड़ता है। हमारी बचत न हो तो सरकारें कंगाल हुई खड़ी हैं। हमारे हजार-पांच सौ जो बैंकों, बीमा आदि में जमा हैं, वही कर्ज बनकर सरकार को मिलता है, तब कई राज्यों में तनख्वाहें बटती हैं। हम टैक्स भी भरते हैं और अपनी बचत भी सौंपते हैं, फिर भी सरकारें दरिद्र हुई जाती हैं! बचतों का टूटना अब जरा खतरनाक हो चला है। महंगाई के समानांतर कमाई नहीं बढ़ती इसलिए बचत तोड़कर राशन खरीदने की नौबत है। बात यहां तक आ गई कि 2022 की पहली छमाही में भारत की शुद्ध वित्तीय बचतें (कर्ज निकालकर) जीडीपी का केवल 4% रह गई हैं। बचतों का यह 30 साल का न्यूनतम स्तर है। यानी भारत के परिवार जितना बचा रहे हैं वह तो सरकारों के कर्ज के लिए भी पर्याप्त नहीं है।

कितना बचाता है भारत: रिजर्व बैंक के आंकड़े बताते हैं 2021 में परिवारों की बचत जीडीपी के अनुपात में 16% पर पहुंच गई। क्योंकि लोग घरों में बंद थे। खपत नहीं थी। 2022 के साल में लॉकडाउन खत्म हुए तो वित्तीय बचत टूटकर

10.8% पर आ गई। यह 2020 से भी कम है, जब कोविड नहीं आया था अर्थात कोविड के बाद कमाई नहीं बढ़ी, जिससे बचतें बढ़ पातीं। लोगों बचत तोड़कर खर्च किया, क्योंकि महंगाई बढ़ गई थी।

अब वित्तीय बचतों की परतें खोलते हैं। बैंक डिपॉजिट तेजी से गिर रहे हैं। वित्तीय बचतों में 2020 में बैंक डिपॉजिट का हिस्सा 36.7% था, जो 2022 में 27.2% रह गया है। बैंक बचतें टूटने से इस कदर परेशान हैं कि कर्मचारियों को डिपॉजिट जुटाने के लक्ष्य दे रहे हैं। बैंक बचतों में भी सहकारी बैंक में जमा बुरी तरह घटा है। 2020 में 58000 करोड़ की बचत थी, 2022 में घटकर 2000 करोड़ रुपए रह गई ! कर्ज की महंगाई के साथ डिपॉजिट पर ब्याज दर बढ़ रही है, लेकिन रोशन हुए चराग तो आंखें नहीं रहीं। अब कमाई ही नहीं बची, जो बैंकों में जमा की जा सके।

कोविड मौतों के कारण बीमा की मांग बढ़ी तो बचतों में बीमा का हिस्सा 2020 में 15.5 से बढ़कर 2022 में 17.8 हो गया। बीमा के साथ प्रॉविडेंट फंड और पेंशन फंड में भी निवेश बढ़ा है। वित्तीय बचतों में छोटी बचत स्कीमों जैसे एनएससी, किसान विकास पत्र, सुकन्या समृद्धि का हिस्सा करीब 2% बढ़ा है। शेयर बाजारों में तेजी के नक्शेकदम पर वित्तीय बचतों में म्युचुअल फंड का हिस्सा 2020 के 2.6% से बढ़कर 2022 में 6.3% हो गया । यानी करीब तीन गुना बढ़त । बचत के हिस्से के तौर पर शेयर यानी इक्विटी में निवेश 0.8% बढ़ा है, मगर उतना नहीं जितनी सफलता एसआईपी क्रांति को मिली। 2020 में कुल बचतें 24 लाख करोड़ रुपए थीं, जो 2022 में केवल 25.60 लाख करोड़ रुपए हो पाई हैं। डिपॉजिट तो 8.27 लाख करोड़ से घटकर 6.53 लाख करोड़ रह गए हैं। अधिकांश आबादी के पास म्युचुअल फंड की समझ नहीं और न ही अतिरिक्त निवेश के लायक बचत म्युचुअल फंड में कुल बचत 2022 में केवल 1.60 लाख करोड़ रही है।

बचत का अंतर्विरोध: बचतों को देनदारियों या कर्ज की रोशनी में ही देखा जाता है। रिजर्व बैंक ताजा आंकड़ा बताता है कि एक तरफ बचतें गिरी हैं तो दूसरी तरफ परिवारों का समग्र कर्ज 2021-22 में छह लाख करोड़ रुपए बढ़कर 83.65 लाख करोड़ रुपए हो गया। कोविड के बाद लोगों को जरूरी खर्च के लिए कर्ज लेना पड़ा है, क्योंकि बचतें भी कम पड़ रही थीं। वित्त वर्ष 2022-23 की पहली छमाही में आम लोगों की शुद्ध बचत (कर्ज निकालकर) जीडीपी की 4% रह गई है, जो बीते वित्त वर्ष में 7.3% थी । शुद्ध वित्तीय बचत से पता चलता है कि किसी देश के पास उसके सरकारी घाटे को पूरा करने के लिए कितने संसाधन हैं। अर्थव्यवस्था की सुरक्षा के लिए देश की बचत दर सरकारों के घाटे दर से तो ज्यादा होनी ही चाहिए, ताकि हिफाजती बचत (प्रीकॉशनरी सेविंग्स) बनी रहें। 2022-23 में समग्र राजकोषीय घाटा 10% (जीडीपी अनुपात में) के बीच रहने के आकलन हैं। राजकोषीय घाटा सरकार के लिए कुल कर्ज की मांग बताता है।

तो करें क्या : 17वीं सदी में यूरोप में खेती और औद्योगिक क्रांति के बाद भी गरीबी बढ़ती गई थी। तब आया सरकार की प्रोत्साहन बचत का दौर। सेविंग्स बैंक शुरू हुए। जर्मनी और ऑस्ट्रिया स्पार्कसेन इनका शुरुआती संस्करण थे। 19वीं सदी तक यूरोप में कई देशों में सेविंग्स कानून बनाकर बचत पर सरकार की गारंटी और प्रोत्साहन दिए गए। इसी दौरान 1873 में भारत में सरकारी सेविंग्स बैंक एक्ट बना। कोलकाता में पोस्ट ऑफिस सेविंग्स बैंक बनाया गया। बचतों को प्रेरित करने के लिए नेशनल सेविंग्स सेंट्रल ब्यूरो बना था। आजादी के बाद 1948 में नेशनल सेविंग्स ऑर्गेनाइजेशन ने छोटी बचत स्कीम लाकर बचत बढ़ाने के अभियान शुरू किए। उस वक्त तक सरकारों को पता चल गया था कि लोग बचाएंगे तभी देश का काम चलेगा। बीते एक दशक में बचत पर टैक्स प्रोत्साहन बंद कर दिए गए हैं। छोटी बचतों पर ब्याज दर भी कम हुई, नतीजा यह है आज देश की वित्तीय सुरक्षा जोखिम में है।

Date:18-01-23

पश्चिम में भारतवंशियों की सफलता का क्या कारण हैं ?

शशि थरूर, (पूर्व केंद्रीय मंत्री और सांसद)

बीते साल भूरी त्वचा वाले, गोपूजक, भारतवंशी ऋषि सुनक यूके के प्रधानमंत्री बने, जिसका सर्वत्र स्वागत किया गया। इसने सबका ध्यान इस तरफ भी खींचा कि धीरे-धीरे भारतवंशी समुदाय (इंडियन डायस्पोरा) की पश्चिमी दुनिया में अहमियत कितनी बढ़ती जा रही है। इसकी एक झलक निजी क्षेत्र में दिखती है, जहां अग्रणी बहुराष्ट्रीय निगमों के प्रमुख के रूप में भारत में जन्मे, पले-बढ़े व्यक्तियों का चयन किया जा रहा है। पेप्सिको में इंदिरा नूयी, माइक्रोसॉफ्ट में सत्या नडेला, गूगल की पैतृक-कम्पनी अल्फाबेट में सुंदर पिचाई का चयन इसका बेहतरीन उदाहरण है कि दुनिया में दबदबा रखने वाली अमेरिकी कम्पनियों के शीर्ष पर भारतीय प्रतिभाएं आसीन हैं। स्टैंडर्ड एंड पुअर्स 500 इंडेक्स के मुताबिक आज दुनिया की 58 अग्रणी कम्पनियों में भारतीय मूल के सीईओ हैं। यह स्थिति तब है, जब इंदिरा नूयी व वोडाफोन के पूर्व प्रमुख अरुण सरीन रिटायर हो चुके हैं, ट्विटर सीईओ पद से पराग अग्रवाल को हटा दिया गया है और दोयचे बैंक-कैंटर फिट्जराल्ड के प्रमुख रह चुके अंशु जैन का निधन हो गया है।

लेकिन अब बात केवल उद्यमियों, सीईओ, बिजनेस लीडरों तक ही सीमित नहीं रह गई है। भारतवंशियों का दबदबा विदेशी राजनीति के क्षेत्र में भी कायम होने लगा है। भारतीय मूल के अंतोनियो कोस्ता 2015 से ही पुर्तगाल के प्रधानमंत्री हैं। कोस्ता के पास भारत की विदेशी नागरिकता भी है। वहीं लियो वराडकर 2017 से आयरलैंड के प्रधानमंत्री हैं और 2020 में इस पद के लिए पुन: चुने गए हैं। यानी इंग्लैंड और आयरलैंड आज जब पोस्ट-ब्रेग्जिट मसलों पर चर्चा करते हैं तो सुनक और वराडकर के रूप में भारतीय मूल के दो नेता आपस में संवाद कर रहे होते हैं। यह यूरोप के लिए बड़ी ही चटपटी अवस्था है। अमेरिका की उपराष्ट्रपति कमला हैरिस की मां भारतीय हैं। 2024 में निक्की हेली रिपब्लिकन पार्टी की उम्मीदवार बन सकती हैं और उनके अभिभावक भी भारतीय हैं।

क्या कारण है कि भारतीय मूल के लोग पश्चिमी जगत में सफल हो रहे हैं? क्या वजह है कि वे उन कम्पनियों और संस्थाओं का नेतृत्व कर रहे हैं, जो पश्चिम में बनी और विकसित हुई हैं और उनके पास स्थानीय प्रतिभाओं की कोई कमी नहीं है? कुछ लोग इसका श्रेय दो सौ साल के ब्रिटिश राज को देते हैं, जिसके कारण भारतीयों का अंग्रेजी भाषा-संस्कृति से गहरा परिचय हो गया। लेकिन इतने भर से तो कोई सफल नहीं हो जाता। वैसे भी, अगर यही कारण रहता तो फिर गैर-अंग्रेजीभाषी यूरोपियन देशों में भारतवंशियों की सफलता का क्या कारण हो सकता है? कुछ अन्य लोग इसका कारण उस अतिरिक्त ऊर्जा और ललक को बताते हैं, जो ये प्रवासीजन अपने साथ नए देशों में लेकर आते हैं। यह कुछ हद तक सच है और भारतीय दूसरे प्रवासी लोगों की तुलना में निश्चित ही अधिक सफल हुए हैं। मिसाल के तौर पर अमेरिका में किसी भी अन्य नस्ली-समूह की तुलना में भारतीय मूल के लोगों की प्रतिव्यक्ति आय सबसे अधिक है।

भारत से जो पहली पीढ़ी के प्रवासी विदेशों में गए थे, उन्होंने कभी भी सुख-समृद्धि को हलके में नहीं लिया था। उन्होंने पर्याप्त अभाव झेले थे। उनके भीतर सफल और स्थापित होने की वह भूख थी, जो पश्चिमी जगत में अनेक लोगों में नहीं होती। उन्होंने अपनी महत्वाकांक्षाओं के चलते स्पर्धा में दूसरों को पीछे कर दिया। वे भारत में वैसी कठिन परिस्थितियों में पलकर बड़े हुए थे, जो उनके पश्चिमी साथियों के लिए अकल्पनीय थीं। उन्होंने संसाधनों की कमी,

सुविधाओं का अभाव, सरकारी-नियंत्रण, नौकरशाही की लेटलतीफी- इस सबको देखा था। भारतीयों को विविधता के साथ जीने की भी आदत है। हमारा इतिहास और बहुलतापूर्ण सामाजिक माहौल भारतीयों को विभिन्न भाषा, धर्म, संस्कृति के लोगों के साथ मिलकर काम करने के लिए तैयार कर देता है। उनके लिए किसी भी बहुराष्ट्रीय निगम में सहकर्मियों के साथ कामकाजी-सम्बंध स्थापित करना सरल हो जाता है। भारत में अपनी परवरिश के दौरान उन्होंने विनम्रता, बड़ों का सम्मान और अपने से ऊंचे ओहदे वाले व्यक्ति का लिहाज करने की मूल्य-चेतना विकसित कर ली होती है। भारतीयों के ये तमाम गुण ही उन्हें औरों से अलग और विशिष्ट बनाते हैं।

Date:18-01-23

एआई टूल्स भी मूल्यों का पालन करते हैं, उन पर निगरानी रखनी होगी

उज्ज्वल दीपक, (लेखक कोलंबिया यूनिवर्सिटी से पढ़े हैं)

2020 में लेखकों और कवियों के एक समूह ने कविता उत्पन्न करने के लिए चैटजीपीटी का प्रयोग किया। उन्होंने क्लासिक कविताओं के डेटासेट पर मॉडल को प्रशिक्षित किया और फिर इसे विभिन्न विषयों और शैलियों का उपयोग करके नई कविताएं गढ़ने के लिए प्रेरित किया। परिणाम काफी प्रभावशाली थे, क्योंकि मॉडल ने ऐसी कविताएं लिखीं, जो न केवल सुसंगत और व्याकरणिक रूप से सही थीं, बल्कि काव्य संरचना, कल्पना और भाषा की गहरी समझ भी प्रदर्शित करती थीं। इस प्रयोग ने प्रदर्शित किया कि चैटजीपीटी में रचनात्मक क्षेत्रों में उपयोग किए जाने की क्षमता है और यह मानव द्वारा उत्पादित सामग्री के बराबर है।

चैटजीपीटी, ओपनएआई द्वारा 2018 में विकसित एक भाषा मॉडल है, जो कृत्रिम बुद्धिमत्ता अनुसंधान प्रयोगशाला है। ये एक प्रोटोटाइप संवाद-आधारित एआई चैटबॉट है, जो प्राकृतिक भाषा को समझने-जवाब देने में सक्षम है। इसकी तीक्ष्ण बुद्धिमता का उदाहरण है कि एक शोध दल ने नए वैज्ञानिक पेपर तैयार करने के लिए एक विशिष्ट क्षेत्र में मौजूदा पेपर्स के डेटासेट पर चैटजीपीटी को फाइन-ट्यून किया, फिर सार और पूर्ण पेपर उत्पन्न करने के लिए मॉडल का प्रयोग किया। विशेषज्ञों ने पाया कि मॉडल द्वारा तैयार कुछ कागजात मानव द्वारा लिखे गए समान गुणवत्ता वाले थे।

जैसे-जैसे ये प्रौद्योगिकियां आगे बढ़ती जा रही हैं, संभावना है कि चैटजीपीटी और अन्य समान मॉडल मानव-समान पाठ को समझने और उत्पन्न करने की उनकी क्षमता में सुधार करना जारी रखेंगे। पर इन तकनीकों का विकास नैतिक और सामाजिक चिंताओं को भी उठाता है, जैसे कि नौकरी का विस्थापन, गलत सूचनाओं का प्रसार और प्रौद्योगिकी का संभावित दुरुपयोग।

जैसे-जैसे एआई का क्षेत्र आगे बढ़ रहा है, यह देखना दिलचस्प होगा कि भविष्य में चैटजीपीटी और अन्य एआई मॉडल का उपयोग मानव रचनात्मकता को बढ़ाने, ज्ञान-सृजन के लिए एक उपकरण के रूप में और विभिन्न क्षेत्रों में मानव शोधकर्ताओं की सहायता के लिए कैसे किया जाएगा। चैटजीपीटी की वास्तविक दुनिया पर प्रभाव डालने की क्षमता- विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहां संसाधन सीमित है- अकल्पनीय है।

पर इस बॉट की क्षमताओं से अधिक चर्चा, इसका गलत सूचनाओं और पूर्वाग्रहों से ग्रसित होना है। होमवर्क असाइनमेंट के लिए चैटजीपीटी या अन्य भाषा मॉडल का उपयोग करने से संभावित रूप से छात्रों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। इन मॉडलों के उपयोग से छात्र अपने काम को पूरा करने के लिए प्रौद्योगिकी पर बहुत अधिक निर्भर हो सकते हैं और मूल्यवान समस्या-समाधान और महत्वपूर्ण सोच-कौशल खो सकते हैं। मॉडल ने गणित की कुछ समस्याओं का गलत उत्तर दिया है और कुछ धार्मिक प्रश्नों पर भेदभावपूर्वक उत्तर दिए हैं। हालांकि बॉट ने इसके लिए उपयोगकर्ताओं से माफी भी मांगी और अपने उत्तरों को ठीक भी किया पर कई बार इसके अति-विस्तृत उत्तरों ने लोगों को दिग्भ्रमित किया है और वापस गूगल पर जाकर उत्तरों की प्रामाणिकता जांची गई है।

आप ये जानकर रोमांचित हो जाएंगे कि यह लेख भी मैंने चैटजीपीटी का इस्तेमाल कर ही लिखा है। जब चैटजीपीटी से मैंने उसके नकारात्मक पहलुओं के बारे में बताने को कहा तो उसने वह भी तार्किक रूप से बताया। सच में ऐसा लगा कि कोई भीष्म पितामह से उनको ही हराने का उपाय पूछ रहा हो और भीष्म बिना किसी भेदभाव के एक निश्चित जीवन-मूल्यों का पालन करते हुए अपनी हार का रास्ता बता रहे हों। कहने का तात्पर्य यह है कि एआई भी एक निश्चित मूल्यों (कोड) का पालन करते हैं और ऐसी तकनीकों का अच्छा या बुरा होना उनके निर्माताओं द्वारा निर्धारित मूल्यों पर निर्भर करता है। इसलिए ऐसी तकनीकों का नियंत्रण अति आवश्यक है।

दैनिक जागरण

Date:18-01-23

एक नई क्रांति के मुहाने पर दुनिया

शिवकांत शर्मा, (लेखक बीबीसी हिंदी सेवा के पूर्व संपादक हैं)

बीते वर्ष प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस ने एक किताब छापी, 'यू आर नाट एक्सपेक्टेड टू अंडरस्टैंड दिस' यानी यह अपेक्षा नहीं कि आप इसे समझ ही लें। दिलचस्प शीर्षक और सामग्री की वजह से चर्चा का विषय बनी यह पुस्तक, जिसकी संपादक टोरी बाश हैं, हमारे वर्तमान और भविष्य पर कृत्रिम बुद्धिमत्ता (आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस-एआइ) और मशीन लर्निंग जैसी तकनीकों के प्रभाव का आकलन करती है। 1975 में जारी किए गए कंप्यूटरों के ओपन सोर्स आपरेटिंग सिस्टम 'यूनिक्स' के छठे संस्करण के लेखकों ने उसके कोड में एक दिलचस्प टिप्पणी डाली थी-आप इसे समझ लें, यह आशा नहीं। यह उस कोड की चमत्कारिक क्षमताओं की घोषणा थी, क्योंकि यह आपरेटिंग सिस्टम अलग-अलग कंप्यूटरों पर एक साथ कई एप्लीकेशन चला सकता था। यहीं से नई तकनीक की वह

यात्रा शुरू हुई, जो आज एलगोरिद्म के जरिये कृत्रिम बुद्धिमता और मशीन लर्निंग तक आ पहुंची है। एआइ के क्षेत्र में गत वर्ष कई उल्लेखनीय बातें हुई हैं, जिनकी वजह से यह किताब लिखी गई है। जैसे फेसबुक की प्रवर्तक कंपनी मेटा के कुछ कर्मियों ने ऐसा एआइ प्रोग्राम बनाने का दावा किया, जो रणनीति के प्रसिद्ध खेल 'डिप्लोमेसी' में अधिकांश लोगों को हरा सकता है। चीन के शेनजेन शहर के अधिकारियों ने दावा किया कि वे 5-जी नेटवर्क से जुड़े मोबाइल के डिजिटल जुड़वा रूपों के जरिये लोगों, उनकी आवाजाही और ऊर्जा खपत की निगरानी कर रहे हैं। इस बीच सबसे अधिक चर्चा चैट-जीपीटी नामक चैट बोट की रही, जो आकलन-विश्लेषण कर सकता है। जटिल विषयों पर लेख लिख सकता है। उलझाऊ समस्याओं के तर्कसंगत हल बता सकता है। चुटकुले और कहावतें समझ सकता है और फंसाने वाले सवाल की गुत्थी सुलझा सकता है। खबरें हैं कि माइक्रोसाफ्ट चैट-जीपीटी बनाने वाली कंपनी 'ओपन-एआइ' में 1,000 करोड़ डालर के निवेश की योजना बना रही है।

माइक्रोसाफ्ट एक छोटी उदीयमान कंपनी पर इतना बड़ा दांव इसलिए लगाना चाहती है, क्योंकि उसे गूगल के सर्च इंजन से मुकाबले के लिए विकल्प की तलाश है। चैट-जीपीटी में उसे ऐसा इंजन बनाने की क्षमता नजर आती है। चैट-जीपीटी में जीपीटी का आशय ऐसी तकनीक से है, जिसमें इंटरनेट पर उपलब्ध नाना विषयों की लाखों किताबों की सामग्री पढ़कर स्मृति का विशालकाय डाटाबेस तैयार होता है। फिर उसका प्रयोग समझने और भाषाई व्यवहार करने में कर सकता है। अभी चैट-जीपीटी शैशव अवस्था में है, लेकिन जैसे-जैसे उसमें और जानकारी भरी जाएगी, वैसे-वैसे उसकी क्षमता और समझ बढ़ती जाएगी। ऐसी मशीनें अनुवाद करने, कानूनी और दफ्तरी दस्तावेज लिखने के अलावा रचनात्मक लेखन या संगीत के कच्चे मसौदे बनाने के काम भी कर सकेंगी, जिसके बाद लेखक उन्हें परिमार्जित कर सकेंगे।

गूगल पर हम शब्द या फिकरे डालकर जानकारी खोजते हैं और सर्च इंजन वांछित जानकारी के सही संदर्भ और विषय के बजाय जहां-जहां शब्द और फिकरा मिले उसे पेश कर देता है, लेकिन यदि कल्पना करें कि आप किसी सर्च इंजन से सधे हुए सवाल करें और वह उसके एकदम सटीक उत्तर खोज दे तो कितना अच्छा होगा? माइक्रोसाफ्ट को 'ओपन-एआइ' से इसी तरह के सर्च इंजन की दरकार है, जिसके सहारे वह गूगल सर्च इंजन के एकछत्र राज को चुनौती देना चाहता है। यह सब इसलिए संभव हो रहा है, क्योंकि आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस प्रोग्राम अब अपनी डीप लर्निंग की पीढ़ी से फाउंडेशन माडल के पड़ाव पर पहुंच गए हैं। पिछले दस वर्षों से हम गूगल और एपल नक्शों के सहारे घूमने के आदी हो गए हैं। अमेजन की एलेक्सा और एपल की सीरी से भी छोटे-मोटे काम करा लेते हैं, लेकिन फाउंडेशन माडल के बोट एकदम अगली पीढ़ी के होंगे। पायलट से कहीं भूल हो रही होगी तो वे चेतावनी देंगे। आपकी कार चलाएंगे। ड्रोन उड़ाएंगे। डाक्टर को बीमारी का सही निदान बताएंगे। संगीतकार के गुनगुनाते ही धुन और संगीत के नोट बनाकर दे देंगे। यह सब इसलिए संभव लगता है, क्योंकि आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस के कोड अब मशीनों को हमारे मस्तिष्क की तंत्रिकाओं के करोड़ों नेटवर्कों की तर्ज पर प्रशिक्षित कर रहे हैं। मशीनें अपनी भूलों से खुद सीख रही हैं। वैसे अभी भी हवाई और रेल यातायात नियंत्रण, विमान नियंत्रण और चालन, मौसम पूर्वानुमान, मिसाइल, राकेट और उपग्रह प्रक्षेपण जैसे काम मशीनों की आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस ही करती है। नई पीढ़ी की एआइ मशीनों में भूल सुधार की क्षमता भी होगी।

टोरी बाश का मानना है कि लगभग हर काम में प्रयोग आने वाली मशीनों के कोड लिखने वाले लोग हम और आप ही हैं। इसलिए ये उनकी धारणाओं से अछूते नहीं रह सकते। नीति-निर्माताओं के लिए चुनौती यह है कि ये मशीनें आंकड़ों को खंगाल और समझ तो सकती हैं, परंतु इनकी नैतिक और सामाजिक जरूरत का सही फैसला नहीं कर सकतीं। आम लोगों के लिए चुनौती यह है कि एक बार जब सब मशीनों में हर जगह एआइ की कोई न कोई मात्रा लग जाएगी तो उन्हें चलाने और उनकी मरम्मत करने वालों को भी उनकी कुछ जानकारी चाहिए होगी। अन्यथा ये कैसे चलेंगी और ठीक

होंगी? संभवतः इसी सोच-विचार के बाद ब्रितानी प्रधानमंत्री ऋषि सुनक ने हाल में कहा कि स्कूलों में बारहवीं कक्षा तक गणित को अनिवार्य किया जाएगा। उनका कहना था कि तेजी हो रहे तकनीकी विकास और बदलाव को देखते हुए गणित की बुनियाद मजबूत किए बिना युवाओं को रोजगार मिलने में दिक्कतें होंगी। आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस और मशीन लर्निंग में हो रहे विकास और रोजगार के प्रत्येक क्षेत्र में गणित की महत्ता को सुनक से बेहतर और कौन समझ सकता है? ऐसे में, भारत के नेताओं और नीति निर्माताओं को भी इस विषय पर जागने की जरूरत है। बुद्धिमान मशीनों की क्रांति औद्योगिक क्रांति के बाद होने वाला सबसे बड़ा परिवर्तन है। लोगों के रोजगार पर इनके संभावित असर को लेकर अभी गहरे मतभेद हैं, लेकिन इस परिदृश्य में हमारे समक्ष दो ही विकल्प हैं- या तो एआइ और उसकी कोडिंग के बारे में जानकारी हासिल करें और मशीनों को अपनी जरूरतों और चुनौतियों के हिसाब से ढालें। या सब कुछ कोड लिखने वालों और मशीनें बनाने वालों पर छोड़ दें।

जनसत्ता

Date:18-01-23

मतदान से दूर

संपादकीय

दूरस्थ मतदान मशीन यानी आरवीएम शुरू करने के निर्वाचन आयोग के प्रस्ताव को विपक्षी दलों ने शुरुआती चरण में ही अस्वीकार कर दिया। हालांकि जब आयोग ने इसे शुरू करने का प्रस्ताव रखा, तभी इसका विरोध शुरू हो गया था। इसके व्यावहारिक पक्षों को लेकर तरह-तरह के सवाल उठाए और शंकाएं जताई जा रही थीं। निर्वाचन आयोग ने सभी दलों को निमंत्रित किया था कि वे आएं और आरवीएम से संबंधित अपनी शंकाएं और सुझाव साझा करें। निर्वाचन आयोग मशीन के व्यावहारिक पक्षों को समझाना और उनकी सहमति मिलने के बाद इसे प्रायोगिक तौर पर लागू करना चाहता था। मगर विपक्षी दलों ने एक स्वर से इस पर असहमति जता दी। उनका कहना है कि अभी इलेक्ट्रानिक मतदान मशीन यानी ईवीएम को लेकर उठ रही शंकाओं के समाधान ही निर्वाचन आयोग नहीं कर पाया है, ऐसे में वह घरेलू प्रवासियों के लिए उसी तरह की मशीन से नई मतदान व्यवस्था करने की पहल कैसे कर सकता है। कुछ नेताओं ने यह तक पूछा कि आयोग मतदान तो कराना चाहता है, मगर प्रवासी मजदूरों के बीच राजनेता अपना प्रचार करने कैसे जाएंगे। इस तरह आरवीएम के व्यावहारिक पहलुओं पर कई गंभीर सवाल खड़े किए गए। जाहिर है, अब इस प्रणाली पर निर्वाचन आयोग के लिए आगे कदम बढ़ाना संभव नहीं होगा।

दरअसल, पिछले अनेक चुनावों से देखा जा रहा है कि मतदान को लेकर लोगों में उदासीनता बनी हुई है। हर चुनाव में पिछले चुनाव की तुलना में मत प्रतिशत कुछ कम दर्ज होते हैं। हालांकि निर्वाचन आयोग लोगों में मतदान के प्रति जागरूकता पैदा करने का पूरा प्रयास करता है। मगर खासकर शहरी मतदाता में उत्साह नहीं पैदा हो पाता। कई जगहों पर तो पचास फीसद से भी कम मतदान होता है। इस तरह लोकतांत्रिक प्रक्रिया प्रश्नांकित होती है। पचास फीसद से भी कम मतदान के बावजूद प्रतिनिधि तो निर्वाचित होते ही हैं, सरकार बनती ही है। फिर सवाल उठता है कि वह सरकार किन लोगों ने बनाई है। विचित्र स्थिति तब देखी जाती है जब कम मत प्रतिशत वाले दल की संख्या अधिक हो जाती है

और वह सत्ता में आ जाता है और अधिक मत प्रतिशत वाला दल बाहर रह जाता है। इस स्थिति को समाप्त करना निस्संदेह निर्वाचन आयोग के लिए बड़ी चुनौती है। मगर यह कैसे संभव हो, इसका उपाय वह निकाल नहीं पाया है। उसे लगता है कि अगर प्रवासी लोगों को अपने मतों का प्रयोग करने की सुविधा मिल जाए तो इससे मत प्रतिशत में बढ़ोतरी हो सकती है।

लंबे समय से रेखांकित किया जाता रहा है कि जो लोग कामकाज, पढ़ाई-लिखाई या दूसरी वजहों से अपना घर-बार छोड़ कर दूरदराज जगहों पर रहने को मजबूर हैं, उन्हें भी अपने मताधिकार का उपयोग करने की व्यवस्था की जानी चाहिए। मगर इसका कोई व्यावहारिक रास्ता अभी तक नहीं निकाला जा सका है। पिछले कुछ सालों में ग्रामीण इलाकों से बहुत तेजी से पलायन बढ़ा है। ऐसे में बड़ी संख्या में ऐसे लोग शहरों में रहने लगे हैं, जिनका मतदाता सूची में नाम अपने गृह प्रदेश में है। निर्वाचन आयोग ने इसी के मद्देनजर दूरस्थ मतदान मशीन की व्यवस्था शुरू करने का प्रस्ताव रखा था। इसके तमाम तकनीकी पहलुओं पर उसने विचार भी कर लिया है। अगर यह लागू हो जाती, तो बेशक इससे न सिर्फ मतदान प्रतिशत बढ़ता, बल्कि अपने मताधिकार के प्रयोग से वंचित लाखों लोगों को सुविधा मिल पाती। इस दृष्टि से इस व्यवस्था पर पुनर्विचार की जरूरत से इनकार नहीं किया जा सकता।

राष्ट्रीय सहारा

Date:18-01-23

चेताती रिपोर्ट

संपादकीय

विश्व आर्थिक मंच (डब्ल्यूईएफ) की वार्षिक बैठक के पहले दिन सोमवार को दावोस में ऑक्सफैम इंटरनेशनल ने पेश वार्षिक असमानता रिपोर्ट-सर्वाइवल ऑफ रिचेस्ट'-में कहा है कि भारत में मात्र एक फीसद लोगों के पास देश की कुल संपत्ति का 40 फीसद हिस्सा है। यह आंकड़ा भी हैरत में डालने वाला है कि नीचे से 50 फीसद आबादी के पास देश की कुल संपत्ति का सिर्फ तीन फीसद है। आंकड़े चौंकाने वाले हैं, लेकिन संपत्ति में असमानता का मुद्दा कोई नया नहीं है। कल्याणकारी अर्थव्यवस्था में सरकार की कोशिश रहती है कि आय और संपत्ति के मामले में असमानता कम से कम की जाए। आजादी के बाद से भारत इस बाबत प्रयासरत था और 1991 तक के आकड़ों से इस बात की तस्दीक होती है कि साल दर साल असमानता कम होने की तरफ अग्रसर थी, लेकिन 1991 में उदारीकरण लागू होने के बाद से असमानता तेजी से बड़ी। उद्योग-हितैषी नीतियां लागू की गईं और कॉरपोरेट को ज्यादा से ज्यादा सहूलियतें मिलने लगीं। इस क्रम में उद्योग और कंपनी क्षेत्रको प्रतिस्पर्धी बनाने की गरज से ऐसी नीतियां लागू हुईं जिनसे देश में पूंजी का प्रवाह और निवेश बढ़ा। लेकिन उदारीकरण के एकदम बाद के वर्षों में श्रम बल अपेक्षानुरूप कुशल नहीं मिला। उद्योग क्षेत्र में बड़े पैमाने पर छंटनी हुई। निवेश बढ़ाने की गरज से बड़े उद्योगों को सहूलियतों में इजाफे के बीच कॉरपोरेट टैक्स में कटौती जैसी व्यवस्थाएं तो की गईं लेकिन आम जन को लाभान्वित करने की बाबत कोईज्यादा प्रयास नहीं हुए। जीएसटी संग्रह में बढ़ोतरी को एक उपलब्धि के रूप में गिनाया जाता है, लेकिन यह टैक्स आम जन पर भारी पड़ रहा है। उसके लिए

आटा और पैंसिल-कागज जैसी चीजें भी महंगी हो गई हैं। आम जन संपत्ति और आय में असमानता के दंश से बचाने के लिए यदि करों को ही तर्कसंगत कर दिया जाए तो काफी राहत मिल सकती है। ऑक्सफैम की रिपोर्ट में कहा गया है कि 10 फीसद धनी लोगों पर कर बढ़ाकर देश के बच्चों की पढ़ाई का खर्च निकाला जा सकता है। अरबपतियों पर 2 फीसद कर लगाया जाए तो कुपोषितों के पोषण के लिए धन की व्यवस्था हो सकती है। रिपोर्ट ने महिलाओं को मिल रहे कम वेतन की तरफ भी ध्यान खींचा है, जो प्रबुद्ध समाज में अस्वीकार्य है। रिपोर्ट पर सरकार के रुख का अभी पता नहीं चला है, लेकिन इसकी मदद से कराधान को तार्किक बनाने की दिशा में जरूर बढ़ा जा सकता है।